॥ श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः ॥

श्री श्री भागवत-पत्रिका

राष्ट्रभाषा हिन्दीमें श्रीश्रीरूप-रघुनाथकी वाणीकी अनुपम वाहिका

वर्ष—१७ संख्या—१-३ प्रबन्ध क्रमांक-२

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजको समर्पित
एवं
नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके
आदेश-निर्देश और प्रेरणानुसार

श्रील भक्तिविनोद ठाकुरका वाणी-वैभव

सहनशीलता और श्रीभक्तिविनोद

प्रश्न १—कृष्णकी प्रसन्नताके लिए सहनशील व्यक्तिका क्या कर्तव्य है?

उत्तर—"यदि कोई तुम्हारा अपमान करता है, तो तुम उसे सहन करना, किसीका अपमान मत करना। इस देहका आश्रयकर किसीका भी बुरा नहीं करना। [प्राकृत] काम कलिका स्थान है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। कृष्णसेवाका काम—अप्राकृत है, उसीका नाम है—प्रेम। इन्द्रियसेवाका काम—प्राकृत है, उसमें ही कलिका स्थान है। उसे अवश्य ही त्यागना चाहिए।"

(कलि, ससङ्गिनी (क्षेत्रवासिनी) सज्जन-तोषणी १५/२)

प्रश्न २—[स्वभजन प्रणालीसे] भिन्न प्रणालीके प्रति असहनशील होना क्या अपने धर्मके प्रति अनुरागका लक्षण है?

उत्तर—"जो भिन्न प्रणालीके प्रति द्वेष, हिंसा, असूया या उसकी निन्दा करते हैं, वे नितान्त असार तथा हतबुद्धि हैं। उनका अपने चरम प्रयोजनके प्रति उतना लगाव नहीं है, जितना वे व्यर्थ विवादका आदर करते हैं।"

(चैतन्य शिक्षामृत १/१)

प्रश्न ३—क्या कामनायुक्त भक्ति करनेवाला व्यक्ति सहनशील हो सकता है?

उत्तर—"जिनकी कामनायुक्त भक्ति है, वे क्रोधको जय नहीं कर सकते। केवल विवेकके द्वारा क्रोधको जय नहीं किया जा सकता। विषयोंके प्रति आसक्ति कुछ ही क्षणमें विवेकको निष्क्रियकर अपने राज्यमें क्रोधको स्थान प्रदान करती है।"

(धैर्य, सज्जन-तोषणी ११/५)

प्रश्न ४—नाम-कीर्तन करनेवालेकी सहनशीलता कैसी होगी?

उत्तर— "वृक्षसम क्षमागुण करबि साधन।
प्रतिहिंसा त्यजि अन्ये करिब पालन।"

अर्थात् नाम-कीर्तन करनेवाला अपनेमें वृक्षके समान क्षमागुण [सहनशीलता] का विकास करेगा तथा प्रतिहिंसाका त्यागकर दूसरोंका [पारमार्थिक रूपसे] पालन करेगा।

(शिक्षाष्टक ३, गीतावली)

प्रश्न ५—'वृक्षसे भी अधिक सहनशील' शब्दसे किस प्रकारकी दया सूचित होती है?

उत्तर—'तरोरपि सहिष्णुना'—इस वाक्यका तात्पर्य है कि वृक्ष इतने सहनशील होते हैं कि वे अपनेको काटनेवाले व्यक्तिको भी सुशीतल छाया एवं समधुर फल प्रदानकर उसका उपकार करना नहीं भूलते। किन्तु कृष्णभक्त तो वृक्षसे भी अधिक सहनशील होनेके कारण शत्रु-मित्र सबका ही उपकार ही करते हैं। यह 'निर्मत्सरता युक्त दया' हरिनाम-कीर्तनकारी साधु-पुरुषोंका द्वितीय लक्षण है।"

(श्रीशिक्षाष्टक-३, सन्मोदन भाष्य)

प्रश्न ६—क्या धैर्यहीन व्यक्तिका हरिभजन हो सकता है?

उत्तर—"भजनशील व्यक्तिके लिए धैर्यकी अति आवश्यकता है। जिसमें धैर्यगुण है, वही धीर है। धैर्यगुणके अभावमें मानव चञ्चल हो उठता है। जो अधीर होते हैं, वे कोई भी कार्य नहीं कर सकते। धैर्यगुणके द्वारा साधक स्वयं अपनेको वशमें रखकर अन्तमें समस्त जगत्को वशमें कर लेता है।"

(धैर्य, सज्जन-तोषणी ११/५)

अमानित्व और श्रीभक्तिविनोद

प्रश्न १—अमानी कैसे हुआ जा सकता है?

उत्तर—"मैं ब्राह्मण हूँ, मैं सम्पन्न हूँ, मैं शास्त्रोंको जाननेवाला हूँ, मैं वैष्णव हूँ, मैं गृहत्यागी हूँ—ऐसा अभिमान मत करना। ऐसी अवस्थाओंमें जो सम्मान है, उसको दूसरे करें, मैं ऐसे अभिमानसे दूसरोंसे पूजाकी आशा नहीं करूँगा—मैं अपनेको दीन, हीन, अकिञ्चन तथा तृणसे भी अधिक सुनीच मानूँगा।"

(जैवधर्म ८ वाँ अः)

प्रश्न २—कृष्ण-कीर्तनकारीको कैसा दीन होना चाहिए?

उत्तर—"तृणाधिक हीन, दीन, अकिञ्चन छार।
आपने मानिब सदा छाड़ि अहङ्कार॥

अर्थात् कृष्णकीर्तनकारी समस्त प्रकारके अहङ्कारको त्यागकर अपनेको तिनकेसे भी अधिक दीन, हीन, अकिञ्चन और तुच्छ मानेगा।"

(शिक्षाष्टक-३ गीतावली)

प्रश्न ३—किस प्रकारसे अपनेको अमानी बनाया जा सकता है?

उत्तर—"स्वयंको दीन जानकर सभीको यथायोग्य सम्मान देकर अपनेको अमानी बनाना चाहिए।"

(श्रीमहाप्रभु शिक्षा १० पः)

प्रश्न ४—देहधारी मनुष्य अपनेको कैसा मानेगा?

उत्तर—"मानवदेह—केवल कारागार मात्र है। इसके साथ आत्माका अनित्य सम्बन्ध है। अतः जबतक इस शरीरमें रहा जाय, तबतक मानवको अपनेको तृणसे भी अधिक नीच जानना चाहिए।"

(तत्त्वसूत्र २३ सूः)

प्रश्न ५—क्या विरूपग्रस्त व्यक्तिके लिए तृणसे भी अधिक हीन होना सङ्गत नहीं है?

उत्तर—"तृण यद्यपि जड़वस्तु है, तथापि उसका वस्तुगत अभिमान(अहङ्कार) न्याय-सङ्गत ही है। किन्तु मेरा वर्तमान स्थूल-सूक्ष्म शरीरगत अभिमान(अहङ्कार) शुद्ध-स्वरूपसम्बन्धी नहीं होनेके कारण वस्तुतः उचित नहीं है। तृणका अभिमान वास्तविक है, किन्तु मेरा जड़ाभिमान अवास्तविक है। अतः मेरे लिए तृणसे भी सुनीच होना यथार्थ ही है।"

(शिक्षाष्टक-३ सन्मोदन भाष्य)

प्रश्न ६—'अमानी' शब्दका तात्पर्य क्या है?

उत्तर—"अमानी शब्दसे कीर्तनकारी साधकोंके मिथ्याभिमान-शून्यतारूप तृतीय लक्षणको सूचित किया गया है। मायाबद्ध जीवोंके स्थूल एवं सूक्ष्म—दोनों देहोंसे सम्बन्धित योगैश्वर्य, भोगैश्वर्य, धन-वैभव, जाति, वर्ण, बल, प्रतिष्ठा और अधिकार इत्यादिसे उत्पन्न होनेवाले जितने भी अभिमान हैं, वे सभी अभिमान जीवस्वरूपके विरोधी एवं मिथ्या हैं। इन मिथ्या अहङ्कारोंसे रहित होना ही 'मिथ्याभिमान-शून्यता' है। इस प्रकार उन अहङ्कारोंके रहनेका हेतु विद्यमान रहनेपर भी मिथ्याभिमान-शून्यता और सहनशीलतारूपी गुणोंसे विभूषित व्यक्ति ही श्रीहरिकीर्तन करनेके योग्यतम अधिकारी हैं। ऐसे शुद्ध साधकभक्त गृहस्थाश्रममें ब्राह्मण आदिका अभिमान तथा त्यागी होनेपर संन्यासी और वैरागी होनेका अहङ्कार—इन सबका सर्वथा परित्याग करके श्रीकृष्णके चरणकमलोंमें ही अनन्यरूपसे चित्तको लगाकर श्रीकृष्णका नाम-सङ्कीर्तन करते हैं।"

(शिक्षाष्टक-३ सन्मोदन भाष्य)

मानदत्व और श्रीभक्तिविनोद

प्रश्न १—'मानद' शब्दका अर्थ क्या है?

उत्तर—"मानद शब्दके द्वारा सभीको यथायोग्य मान देना ही सङ्कीर्तनकारी भक्तिसाधकोंके चतुर्थ लक्षणको सूचित करता है। वे सभी जीवोंको कृष्णदास जानकर किसीसे भी द्वेष या किसीके प्रति प्रतिहिंसाकी भावना नहीं रखते। वे अपने मधुर वचनोंसे एवं जगत्-मङ्गलकारी आचरणोंसे सभीको सन्तुष्ट रखते हैं।"

(शिक्षाष्टक-३ सन्मोदन भाष्य)

प्रश्न २—यथायोग्य सम्मान देनेसे क्या समझा जाता है?

उत्तर—"वैष्णवोंका ही सम्मान होना चाहिए। यदि वैष्णव-सन्तान शुद्ध-वैष्णव हों, तो उनकी भक्तिके तारतम्यसे ही उनके सम्मान का तारतम्य होगा। यदि वैष्णव-सन्तान केवल व्यवहारिक मनुष्य हों, तो उनकी गणना व्यवहारिक मनुष्योंमें ही करनी चाहिए, उनकी गणना वैष्णवोंमें नहीं करनी चाहिए तथा उनका वैष्णवके रूपमे सम्मान नहीं करना चाहिए। जो वैष्णव हैं, उनका वैष्णवोचित सम्मान करना चाहिए। जो वैष्णव नहीं हैं, उनका मानवोचित सम्मान करना चाहिए। दूसरोंके प्रति मान देनेवाला नहीं होनेपर हरिनाममें अधिकार प्राप्त नहीं होता।"

(जैवधर्म ८ वाँ अः)

प्रश्न ३—अपनेको गुरु मानना क्या मानदधर्मके विरुद्ध नहीं है?

उत्तर—"निजे श्रेष्ठ जानि, उच्छिष्टादि दाने,
हं'बे अभिमान भार।
ताइ शिष्य तब, थाकिया सर्वदा,
ना लइब पूजा कार॥

अर्थात् अपनेको श्रेष्ठ मानकर दूसरोंको अपना उच्छिष्ट प्रदान करनेपर अभिमान बढ़ जाता है। इसलिए मैं सर्वदा आपका शिष्य बनकर रहुँगा और कभी किसीकी पूजा ग्रहण नहीं करूँगा।"

(प्रार्थना, लालसामयी ८, कल्याण कल्पतरु)

('श्रीभक्तिविनोद-वाणी-वैभव' नामक ग्रन्थसे अनुदित)

श्रीश्रीभागवत-पत्रिकाका संग्रह — पुराने अङ्कोको डाउनलोड किजिए।

प्रस्तुति – श्रीश्रीभागवत-पत्रिका सेवक-मण्डली